3 परीक्षा

प्रस्तुत कहानी के माध्यम से मनुष्य के मानवीय गुणों को उभारा गया है। दीवान पद के सभी उम्मीदवार अपने गुणों को बढ़ा-चढ़ाकर दिखा रहे थे, परंतु सुजानसिंह ने दिखावे या आडंबर के इस वातावरण में एक ऐसे सच्चे एवं योग्य युवक को दीवान पद का अधिकारी चुना, जिसके हृदय में गरीबों के प्रति सच्ची दया, करुणा, सहयोग और परोपकार की भावना थी।

सच्चा प्रयास कभी निष्फल नहीं होता है। – विल्सन

जब रियासत देवगढ़ के दीवान सुजानसिंह बूढ़े हुए, तो उन्हें परमात्मा की याद आई। जाकर महाराज से उन्होंने विनय की– "दीनबंधु! दास ने श्रीमान् की सेवा चालीस साल तक की। अब कुछ दिन परमात्मा की भी सेवा करने की आज्ञा चाहता हूँ। दूसरे, अब अवस्था भी ढल गई, राज-काज सँभालने की शक्ति नहीं रह गई, कहीं भूल-चूक हो जाए, तो बुढ़ापे में दाग लगे, सारी ज़िंदगी की नेकनामी मिट्टी में मिल जाए।"

राजा साहब अपने अनुभवशील और नीति-कुशल दीवान का बड़ा आदर करते थे। उन्होंने बहुत समझाया, लेकिन जब दीवान साहब न माने, तो हारकर उन्होंने उनकी प्रार्थना स्वीकार कर ली, पर शर्त यह लगा दी कि रियासत के लिए नया दीवान उन्हीं को खोजना पड़ेगा।

दूसरे दिन देश के प्रसिद्ध समाचार-पत्रों में यह विज्ञापन निकला–"देवगढ़ के लिए एक सुयोग्य दीवान की आवश्यकता है। जो सज्जन अपने को इसके योग्य समझें, वे वर्तमान दीवान सरदार सुजानसिंह की सेवा में उपस्थित हों। यह ज़रूरी नहीं कि वे ग्रेजुएट हों, मगर उनका हृष्ट-पुष्ट होना आवश्यक है। मंदाग्नि के मरीज़ों को यहाँ तक आकर कष्ट उठाने की कोई ज़रूरत नहीं। एक महीने तक उम्मीदवारों के रहन-सहन, आचार-विचार की परख की जाएगी; विद्या कम, परंतु कर्तव्य का अधिक विचार किया जाएगा। जो महाशय इस परीक्षा में खरे उतरेंगे, वे ही इस उच्च पद पर सुशोभित होंगे।"

इस विज्ञापन ने सारे मुल्क में हलचल मचा दी। ऐसा ऊँचा पद और किसी प्रकार की कैद नहीं। केवल नसीब का खेल है। सैकड़ों आदमी अपना-अपना भाग्य परखने के लिए चल पड़े। देवगढ़ में नए-नए और रंग-बिरंगे मनुष्य दिखाई देने लगे। प्रत्येक रेलगाड़ी से उम्मीदवारों का एक मेला-सा उतरता। कोई पंजाब से चला आ रहा था, तो कोई मद्रास से। कोई नए फ़ैशन का प्रेमी था, तो कोई पुरानी सादगी पर मिटता था। पंडितों और मौलवियों को भी अपने-अपने भाग्य की परीक्षा करने का अवसर मिला। बेचारे सनद के नाम को रोया करते थे, तो यहाँ उसकी कोई ज़रूरत नहीं थी। रंगीन तमगे, चोगे और नाना प्रकार के अँगरखे और कंटोप देवगढ़ में अपनी सजधज दिखाने लगे, क्योंकि सनद की कैद न होने पर भी सनद से परदा तो ढका ही रहता है।

सरदार सुजानसिंह ने इन महानुभावों के आदर-सत्कार का बड़ा अच्छा प्रबंध कर दिया था। लोग अपने-अपने कमरों में बैठै हुए रोज़ेदार मुसलमानों की तरह महीने के दिन गिना करते थे। हर एक मनुष्य अपने जीवन को अपनी बुद्धि के अनुसार अच्छे रूप में दिखाने की कोशिश करता था। 'मिस्टर 'अ' दिन के नौ बजे तक सोया करते थे, लेकिन आजकल वे बगीचे में टहलते हुए उषा का दर्शन करते थे। मिस्टर 'ब' को हुक्का पीने की लत थी, पर आजकल वे बहुत रात गए किवाड़ बंद करके अँधेरे में हुक्का पीते थे। मिस्टर 'स', 'द' और 'ज' से उनके घरों पर नौकरों की नाक में दम था, लेकिन ये सज्जन आजकल 'आप' और 'ज़नाब' के बगैर नौकरों से बातचीत नहीं करते थे। महाशय 'क' नास्तिक थे-हक्सले के उपासक, मगर आजकल उनकी धर्मनिष्ठा देखकर मंदिर के पुजारी को पदच्युत हो जाने की आशंका लगी रहती। मिस्टर 'ल' को किताबों से घृणा थी, परंतु आजकल बड़े-बड़े धर्मग्रंथ खोले पढ़ने में डूबे रहते थे। जिससे भी बातचीत कीजिए, वही नम्रता और सदाचार का देवता मालूम होता था। शर्माजी बड़ी रात से ही वेद-मंत्र पढ़ने लगते थे और मौलवियों को नमाज़ तलावत के सिवा और कोई काम ही न था। लोग समझते थे कि एक महीने का झंझट है, किसी तरह काट लें, कहीं कार्य सिद्ध हो गया तो फिर कौन पूछता है? लेकिन मनुष्यों का वह बूढ़ा जौहरी आड़ में बैठा देख रहा था कि इन बगुलों में हंस कहाँ छिपा है?

एक दिन नए फ़ैशन वालों को सूझी कि आपस में हॉकी का खेल हो जाए। यह प्रस्ताव हॉकी के मँझे खिलाड़ियों ने पेश किया। यह भी तो आखिर एक विद्या है, इसे क्यों छिपा रखें? संभव है, कुछ हाथों की सफ़ाई ही काम कर जाए। चलिए तय हो गया, कोर्ट बन गए, खेल शुरू हो गया और गेंद किसी दफ़्तर के अपरेंटिस की तरह ठोकरें खाने लगी।

रियासत देवगढ़ में यह खेल बिल्कुल निराला था। पढ़े-लिखे भलेमानुस तो शतरंज और ताश जैसे गंभीर खेल खेलते थे। दौड़-कूद के खेल तो बच्चों के खेल समझे जाते थे।

खेल बड़े उत्साह से जारी था। धावे के लोग जब गेंद लेकर तेज़ी से उठते, तो ऐसा जान पड़ता था कि कोई लहर बढ़ती चली आती है, लेकिन दूसरी ओर के खिलाड़ी इस बढ़ती हुई लहर को इस तरह रोक लेते थे मानो लोहे की दीवार हों।

संध्या तक यह धूम-धाम रही। लोग पसीने में तर हो गए। खून की गरमी आँख और चेहरे से झलक रही थी। हाँफते-हाँफते बेदम हो गए, लेकिन हार-जीत का निर्णय न हो सका। अँधेरा हो गया था। इस मैदान से ज़रा दूर हटकर एक नाला था। उस पर कोई पुल न था। पथिकों को नाले में घुसकर आना पड़ता था। खेल अभी बंद हुआ था और खिलाड़ी लोग बैठे दम ले रहे थे कि एक किसान अनाज़ से भरी हुई गाड़ी लिए

उस नाले के पास आया। लेकिन कुछ तो नाले में कीचड़ था और कुछ उसकी चढ़ाई इतनी ऊँची थी कि गाड़ी ऊपर न चढ़ सकती थी। वह कभी बैलों को ललकारता, कभी पहिये को हाथों से ढकेलता, लेकिन बोझ अधिक था और बैल कमज़ोर। गाड़ी ऊपर को न चढ़ती, और चढ़ती भी तो कुछ दूर चढ़कर फिर खिसककर नीचे पहुँच जाती। किसान बार-बार ज़ोर लगाता और बार-बार झुँझलाकर बैलों को मारता, लेकिन गाड़ी उभरने का नाम न लेती। बेचारा किसान इधर-उधर निराश होकर ताकता, मगर वहाँ कोई सहायक नज़र न आता था। गाड़ी को अकेले छोड़कर वह कहीं जा भी नहीं सकता था। वह बड़ी विपत्ति में फँसा हुआ था। इसी बीच खिलाड़ी हाथों में डंडे लिए झूमते-झामते उधर से निकले। किसान ने उनकी तरफ़ सहमी हुई आँखों से देखा, परंतु किसी से मदद माँगने का साहस न हुआ। खिलाड़ियों ने भी उसको देखा, मगर बंद आँखों से। उनमें सहानुभूति का नाम तक न था; उनमें स्वार्थ था, मद था, मत्सर था, उदासीनता थी, पर वात्सल्य का नाम भी न था। उसी समूह में एक ऐसा मनुष्य भी था, जिसके हृदय में दया थी और साहस था। आज हॉकी खेलते हुए उसके पैरों में चोट लग गई थी। लँगड़ाता हुआ वह धीरे-धीरे चला आ रहा था। अकस्मात् उसकी निगाह गाड़ी पर पड़ी। वह ठिठक गया। उसे किसान को देखते ही सब बात ज्ञात हो गई। उसने हॉकी किनारे पर रख दी, कोट उतारा और किसान के पास जाकर बोला, "मैं तुम्हारी गाड़ी निकलवा दूँ?"

किसान ने देखा कि गठे हुए बदन का एक लंबा आदमी सामने खड़ा है। डरकर बोला, "हुज़ूर! आपसे कैसे कहूँ?" युवक ने कहा, "मालूम होता है, तुम यहाँ बड़ी देर से फँसे हुए हो। अच्छा, तुम गाड़ी पर जाकर बैलों को साधो, मैं पहिये को ढकेलता हूँ। अभी गाड़ी नाले के ऊपर आ जाती है।"

किसान गाड़ी पर जाकर बैठा, युवक ने पहिये को ज़ोर लगाकर खिसकाया। कीचड़ बहुत ज़्यादा था। वह घुटने तक ज़मीन में गड़ गया, लेकिन उसने हिम्मत न हारी।

उसने फिर ज़ोर लगाया, उधर किसान ने बैलों को ललकारा, बैलों को सहारा मिला, उनकी भी हिम्मत बँध गई, उन्होंने कंधे झुकाकर एक बार ज़ोर लगाया, बस गाड़ी नाले के ऊपर थी।

किसान युवक के सामने हाथ जोड़कर खड़ा हो गया और बोला, "महाराज!आपने आज मुझे उबार लिया, नहीं तो सारी रात यहीं बैठना पड़ता।"

युवक ने हँसकर कहा, "अब मुझे कुछ इनाम देते हो?"

किसान ने गंभीर भाव से कहा, "नारायण चाहेंगे, तो दीवानी आपको ही मिलेगी।"

युवक ने किसान की तरफ़ गौर से देखा। उसके मन में एक संदेह हुआ- कहीं यह सुजानसिंह तो नहीं? आवाज़ मिलती है। चेहरा-मोहरा भी वही है। किसान ने भी उसकी ओर तीव्र दृष्टि से देखा। शायद वह उसके दिल के संदेह को भाँप गया। मुसकराकर बोला, "गहरे पानी में पैठने से ही मोती मिलता है।"

निदान महीना पूरा हुआ। चुनाव का दिन आ पहुँचा। उम्मीदवार लोग प्रात:काल से ही अपनी किस्मत का फ़ैसला सुनने के लिए उत्सुक थे। दिन काटना पहाड़-सा हो गया। प्रत्येक के चेहरे पर आशा और निराशा के रंग आते थे। नहीं मालूम आज किसके नसीब जागेंगे, न जाने किस पर लक्ष्मी की कृपादृष्टि होगी? संध्या समय राजा साहब का दरबार सजाया गया, शहर के रईस और धनाढ्य लोग, राजा के कर्मचारी और दरबारी तथा दीवानी के उम्मीदवार, सब रंग-बिरंगे, सज-धज बनाए दरबार में आ विराजे। उम्मीदवारों के कलेजे धड़क रहे थे।

तब सरदार सुजानसिंह ने खड़े होकर कहा—" दीवानी के उम्मीदवार महाशयो! मैंने आप लोगों को जो कुछ कष्ट दिया हो, उसके लिए क्षमा कीजिए। मुझे इस पद के लिए एक ऐसे पुरुष की आवश्यकता थी, जिसके हृदय में दया हो और साथ-ही-साथ आत्म-बल भी। हृदय वही है, जो उदार हो, आत्म-बल वही है, जो विपत्ति का वीरता के साथ सामना करे और इस रियासत के सौभाग्य से हमको ऐसा पुरुष मिल गया। ऐसे गुण वाले संसार में कम हैं, जो हैं वे कीर्ति और मान के शिखर पर बैठे हुए हैं। उन तक हमारी पहुँच ही नहीं। मैं रियासत को पंडित जानकीनाथ-सा दीवान पाने पर बधाई देता हूँ।"

रियासत के कर्मचारियों और रईसों ने पं० जानकीनाथ की तरफ़ देखा और उम्मीदवारों के दल की आँखें भी उधर उठीं, मगर उन आँखों में सत्कार था और इन आँखों में ईर्ष्या।

सरदार साहब ने फ़िर फरमाया–"आप लोगों को यह स्वीकार करने में कोई आपत्ति न होगी कि जो पुरुष स्वयं ज़ख्मी होने पर भी एक गरीब किसान की भरी हुई गाड़ी को दलदल से निकालकर नाले के ऊपर चढ़ाए, उसके हृदय में साहस, आत्म-बल और उदारता का निवास है। ऐसा आदमी गरीबों को कभी न सताएगा। उसका संकल्प दृढ़ है, जो उसके चित्त को स्थिर रखेगा। वह चाहे स्वयं धोखा खा जाए, परंतु दया और धर्म के मार्ग से कभी न हटेगा।"

–प्रेमचंद